औरतज़ात

उर्मिला पवार

वकील साहब को कोर्ट के बरामदे में आता देख मैं और सदाशिव उठकर उनके पास चले गये।

"सबूत लाये हो?" वकील साहब ने पूछा।

"ना" में गर्दन हिलाते हुए सदाशिव ने कहा, "मैंने कोशिश की, लेकिन कोई कुछ कहने के लिए तैयार नहीं है। जिस पुरोहित ने शादी करवायी, वह भी बात टाल गया।" वकील साहब ने भौंहे तानते हुए कहा, "ठीक है। जो सबूत उपलब्ध हैं वही पेश करेंगे। वह टूटा हुआ ताला तो है ना?"

पर्स में रखा ताला टटोलते हुए मैंने हामी भरी। वकील साहब ने पूछा, "और वह पड़ोसन आयी है?"

"साब, वह डरती है। ताला तोड़कर प्रभाकर घर में घुसा और उसके साथ उस वक्त कोई दूसरी औरत थी यह बात किसी से न कहने की उसे सख्त हिदायत दी गयी है," मैंने कहा।

"तो सब भगवान भरोसे है, क्यों? ठीक है, हम उसे सम्मन भेजेंगे, अगली तारीख लेंगे, आज सदाशिव की गवाही लेंगे। तब तक मैरिज सर्टिफिकेट..." मैंने गर्दन हिलाकर हां कहा और हारे खिलाड़ी की तरह निराश होकर बेंच पर बैठ गयी। मेरे पास आकर बैठते हुए लगभग धमकानेवाले अन्दाज़ में सदाशिव ने कहा, "बाबा ने कहा है, अभी भी सोच लो। केस वापिस लो। अपने यहां आज तक कभी औरतज़ात ने अपने पति पर केस नहीं ठोका है, खासकर तलाक का।"

मुझे गुस्सा आया। मैंने लगभग चिल्लाते हुए कहा, "क्यों मेरा दिमाग चाट रहे हो? शादी का सबूत लाने के लिए रुपया देकर तुम्हें गांव भेजा था। क्या किया तुमने? खाली हाथ वापस लौट आये और यहां बैठकर मेरा दिमाग खा रहे हो। निकल जाओ यहां से।" वह सचमुच उठकर चलता बना। मैं देखती रह गयी।

सदाशिव मेरा भाई है, सौतेला भाई होने के बावजूद मैंने उसे कभी सौतेला नहीं माना। एक ही घर में पैदा हुए, पले। कहते हैं साथ-साथ रहने से प्रेम बढ़ता है लेकिन प्रेम सिर्फ़ मेरे ही मन में बढ़ा। सदाशिव के मन में नहीं। असल में गुस्सा तो मुझे उस पर होना था। मेरे बाबा के प्यार में वह और उसकी मां हिस्सेदार बनकर आए थे।

सम्मन लेकर प्रभाकर को घेरने के काम में सदाशिव से मदद ज़रूर मिली थी। प्रभाकर ने पहले कई बार सम्मन की तारीख पता कर झांसा दिया था।

दोपहर की चिलचिलाती धूप में सूनी आंखों से सामने देखते हुए बैठी थी कि अचानक पान के ठेले पर खड़ा सदाशिव दिखाई दिया। पान चबाता हुआ, सिगरेट के छल्ले हवा में छोड़ता हुआ वह किसी के साथ बतिया रहा था। वह प्रभाकर था। मेरी तरफ़ उसकी पीठ थी। प्रभाकर के साथ उसकी बीवी थी, मेरी सौत। कोर्ट में वह प्रभाकर के साथ खुल्लमखुल्ला घूमते हुए मानो मुझे और कोर्ट को चुनौती दे रही थी। सदाशिव भी वहीं उनके साथ खड़ा अपनी बत्तीसी दिखाते हुए हंसता चला जा रहा था। पल भर के लिए मेरा दिमाग भन्ना गया।

सबूत लाने के लिए सदा गांव गया था लेकिन वहां उसने गांव के लोगों की बैठक बुलाई। बैठक में निर्णय लिया गया कि बच्चा पैदा होने तक मैं उन दोनों को अपने घर में आसरा दूं। बच्चा पैदा होते ही वे दूसरी जगह रहने चले जायें।

यह बात मैं कैसे मानती? दो पत्नियों के बीच एक पतिवाली अजीब तिकोनी गृहस्थी मुझे नहीं चाहिए थी। आंखों के सामने उन दोनों का उठना-बैठना मैं कैसे सह पाती? इसलिए मैंने एक निर्णय किया था कि जब प्रभाकर ने उसके साथ

शादी की है तो अलग घर लेकर उसके साथ वहीं जाकर रहे। मेरे घर में अब वह कतई नहीं रहेगा। मेरी अम्मा ने जो सहा था, वही सब सहने की ताकत मुझमें नहीं थी।

मेरे पैदा होने के बाद अम्मा को कोई बच्चा पैदा नहीं हुआ। इसलिए, दस साल बाद बाबा ने दूसरी शादी की। इस तरह माई घर आयी। अम्मा ने बड़े दिल से माई को स्वीकारा। लोग अम्मा की तारीफ़ करते। कहते कि औरत हो तो तारा की मां जैसी हो। सौत के साथ अपनी छोटी बहन जैसा व्यवहार करती है। अम्मा की हालत देखकर मुझे माई पर गुस्सा आता। बाबा पर भी गुस्सा आता। दो शादियां करने वाले सभी पुरुषों और उनकी दो नम्बर की पत्नियों से मुझे नफ़रत थी।

मुझे लगता औरतें ही औरतों के घर तोड़ती हैं। ऐसे कई पुरुष हमारे रिश्तेदारों में थे जिन्होंने छोटी और मामूली-सी वजहों से दोबारा शादी रचाई थी। लेकिन कभी मेरा पति भी यह करेगा, यह मैंने नहीं सोचा था। प्रभाकर पढ़ा-लिखा है, नौकरी करता है और कार्यकर्ता है। लेकिन शादी के चार-पांच साल बाद भी बच्चा नहीं हुआ तो उसका स्वर भी शिकायती हो गया। मेरे ससुरालवाले और मायकेवालों ने भी उसे दूसरी शादी की सलाह देनी शुरू की।

रात दिन प्रभाकर सभाओं, मोर्चों, शिविर, लोगों के सरकारी काम, कार्यकर्ताओं से मिलना, आदि में व्यस्त रहता। घर लौटते ही बाहर के सभी कामों की थकान वह बच्चा न होने का बहाना बनाकर मुझ पर उतारता। धीरे-धीरे यह रोज़मर्रा की बात हुई। मैं भी तंग आ गयी। प्रभाकर के पीछे पड़कर हमने अपना चेकअप करवा लिया। दोनों की रिपोर्ट्स बिल्कुल नॉर्मल थी। प्रभाकर से मैंने कहा कि हम दूसरे डॉक्टर को दिखायेंगे। लेकिन उसने कभी मेरी बात नहीं मानी।

एक दिन बिना कुछ कहे प्रभाकर गायब हुआ और पन्द्रह दिनों बाद लौटा। सामाजिक कार्यकर्ता की हैसियत से उसका घूमना-फिरना बदस्तूर जारी था, सो मैं चुप थी।

प्रभाकर लौटा तो मैंने गुस्से से पूछा कि इतने दिन वह कहां था? हर वक्त घर से बाहर क्यों रहता है? जवाब में दुत्कारते हुए उसने कहा,

"घर में है ही क्या देखने लायक?"

"यानी, बाहर कोई देखने लायक मिल गयी है?"

"देखों तारा, मैं बच्चा चाहता हूं।"

"कौन है वह?" उसे बीच में ही रोकते हए मैंने पूछा।

"तुम्हारे ननिहाल की तरफ़ की ही है। सोनबावड़ी की।"

यानि सदाशिव के ननिहाल की। माई की गांववाली। मेरे माथे की नस तड़की। मैंने पूछा, "आखिर क्या करना चाहते हैं आप?"

"वही मैं बता रहा था... हमने गांव में शादी कर ली है। उसे यहां लाने के लिए तुम्हारी इजाज़त...।"

"मेरी इजाज़त?" मैं चीखी। मेरे बदन में आग लग गई। "शादी करने से पहले मेरी इजाज़त ली?

"मैंने शादी की है उसके साथ?"

"वाह...ऽ। क्या तीर मारा है? लेकिन यह सब ऐसे चोरी छिपे क्यों किया? करने के बाद फिर यहां क्यों आते हो? क्या तुम जानते नहीं कि ये घर मेरा है?" मैंने जो कुछ कहा उससे प्रभाकर कुढ़ गया। बोला, "ज़रा मुंह संभालकर बात करना।" मैंने कहा, "क्यों? तुमने मुझे धोखा दिया, मेरी सौत लेकर आये इसलिए चुप रहूं? खुद गुनाह करके मुझ पर रौब गांठने में शर्म नहीं आती?"

प्रभाकर दौड़कर मेरे पास आया और मेरी कलाई मरोड़ते हुए बोला, "खबरदार अगर मुझे शर्मिन्दा करने की कोशिश की तुमने!"

चिल्लाकर मैंने पूछा, "क्या कर लोगे?" तो तुरन्त प्रभाकर ने मेरे गाल पर झन्नाटेदार तमाचा रसीद करते हुए कहा, "बांझ होकर ज़बान लड़ाती हो?..."

मैं चीखी, "चले जाओ... निकल जाओ यहां से ...मैं शायद बहुत ज़ोर से चीखी थी क्योंकि किसी ने हमारे घर की कॉलबेल दबायी। दरवाज़ा खोलकर देखा तो डरी हुई पड़ोसन पूछने लगी, "क्या हुआ?" उसे नज़रअन्दाज़ करते हुए मैं दरवाज़े से ही चिल्लाई, निकलो, निकल जाओ कहा ना?"

खुला दरवाज़ा, उसमें से झांकते पड़ोसी और मेरा चंडिका-सा रूप देखकर प्रभाकर बौखला गया।

दांत पीसते हुए उसने अपना ब्रीफकेस उठाया और मेरी तरफ़ देखते हुए आंखें तरेर कर कहा, "देख लूंगा तुझे" और वह झट-से बाहर निकल गया। मैं सोफे पर लुढ़क गयी।

पता नहीं कितने देर तक मैं उसी तरह बैठी रही। अंधेरा घिर आया तो मुझे एक बात का डर लगने लगा। रात भर में कभी लौट कर प्रभाकर ने दरवाज़े पर तमाशा खड़ा किया तो? मैं क्या कर सकती थी, मैं फिर उठी। थैली में दो साड़ियां ठूंसी। दरवाज़े पर बड़ा-सा ताला ठोंका। तुरन्त सदाशिव की खोली की तरफ़ चल दी।

सदाशिव भी सुनते ही भड़क गया। "उसकी ये मजाल?" कहते-कहते दो-चार तगड़ी-भद्दी गालियां उसने प्रभाकर के नाम पर चस्पां कर फिर मुझसे पूछा, "फिर अब करना क्या चाहती हो तुम?"

"उस पर मुकदमा ठोकेंगे, और क्या?" मैंने कहा।

"और नहीं तो क्या", सदा ने भी कड़ा रुख अपनाते हुए कहा, उसे अपने किये की सज़ा तो दिला के रहेंगे।"

मैं रात भर सो नहीं पायी। प्रभाकर का हमेशा से गायब रहना, दूसरी शादी के बारे में बताना और झन्नाटेदार तमाचा जड़ देना, सब एक-एक कर याद आने लगा। सुबह मैंने सदाशिव से कहा कि वह प्रभाकर की कंपनी में जाकर उससे मिले और पता करे कि लड़की कौन है, और कब उन दोनों ने शादी की।

सदाशिव ने कहा, "ठीक है पता करते हैं कि उसने किया क्या है? और दफ्तर नहीं जाओगी आज।"

"नहीं। हरारत-सी लग रही है। तुम वहां रुकना मत। शाम को जल्दी लौट आना।"

"ज़रा, दस रुपये देना तो", खिसियानी हंसी हंसते हुए सदाशिव ने कहा। उसे दस के नोट थमाते हुए मैंने कहा, "कुछ पता करके ही आना। कुछ सुराग ज़रूर लाना।"

दोपहर ढलने के बाद सदाशिव लौटा। लेकिन लौटा हुआ सदाशिव कोई और ही था। हो सकता है प्रभाकर से गलती हुई हो लेकिन बच्चे की खातिर... कहते हुए वह मुझे ही समझाने लगा।

उसकी बातों से कुछ इतना पता चला कि चार दिन पहले गांव में ही प्रभाकर की शादी हो चुकी है और उसकी नयी ब्याहता गांव में प्रभाकर के ही घर रहती है।

रातवाली थैली उठाकर शाम की गाड़ी से मैं गांव रवाना हुई। सुबह थके हुए तन-मन से मैंने गांव में कदम रखा तो सब लोगों को अपनी तरफ़ ताकते हुए पाया। किसी के चेहरे पर मुझे पढ़ने की कोशिश थी, तो किसी चेहरा "प्रभाकर की पत्नी क्यों आई?" इस बात का अन्दाज़ा लगाने की कोशिश कर रहा था।

आंगन में आयी तो देखा कि ससुरजी बरामदे में बैठे चिलम पी रहे हैं। मुझे देखते ही वह सकपकाये। उन्होंने कहा, "ताराबाई? अचानक कैसे आना हुआ?" मैंने थैली नीचे रखी। अभी बैठ ही रही थी कि अन्दर के दरवाज़े के पास कहीं चूड़ियां खनकीं। पल भर में झांककर कोई दरवाज़े के पीछे छिप गया, यह मैंने महसूस किया।

मैं कुछ कहती इससे पहले ससुरजी बोले, "ताराबाई, यात्रा से थक गयी होंगी। हाथ-मुंह धो लो। फिर बातचीत होती रहेगी।"

“अब बचा क्या है बोलने के लिए”, मैंने कहा, “इतना सब हुआ और आपने मुझे खबर भी नहीं की।”

“क्या कहा? बताया नहीं?” जली हुई तमाखू चिलम से नीचे झटकते हुए अचरज भरे स्वर में ससुर ने कहा, “लेकिन प्रभाकर ने तो यही कहा कि इस शादी के बारे में तुम्हें कोई आपत्ति नहीं है।”

मैं समझ नहीं पायी कि ससुरजी को क्या कहूं? गुस्से से सिर चकराने लगा। सीढ़ियां उतरकर मैं एकदम अन्दर गयी... अन्दर चूल्हे के पास मेरी सौत लम्बा घूंघट काढ़े बैठी थी। मुझे देखकर वह डर गई। बिल्ली की तरह मेरी तरफ़ देखने लगी। उसके हाथ की हरी चूड़ियां या माथे की बड़ी बिन्दी से ज़्यादा उसकी कमसिनी ही मेरे सीने में खंजर की तरह उतर गई। अचानक मैं चिल्लाई, “इसका अंजाम बहुत बुरा होगा,कहे देती हूं।” ससुरजी हड़बड़ाकर अंदर आते हुए बोले, “धीरज से काम लो ताराबाई, धीरज से।”

“कैसे धीरज धरूं? ये सब करके मेरी ज़िन्दगी में आग लगाते हुए आप लोगों को मेरा ख्याल नहीं आया?...” मैं चीख-चीख कर बोल रही थी। आवाज़ सुनकर गांव के लोग आंगन में इकट्ठे हो गये। ससुरजी बाहर गये और उन पर बरसे, “यहां तमाशा चल रह है क्या? चलो, निकलो यहां से।” लोग जाने के लिए मुड़े तो मैं चिल्लाई, “रुको, मैं आपसे पूछती हूं... मैं इस घर की बहू हूं। और मेरे होते हुए आप इस लड़की को बहू बनाकर कैसे ले आये?”

मेरी बात जैसे लोगों तक पहुंची ही नहीं, वे चुपचाप चलते चले गये। अपनी थैली उठाते हुए उनके पीछे मैं चल पड़ी। “ठीक है, मैं भी देख लूंगी...”

“ताराबाई... ताराबाई... सुनो तो...” ससुर कहते रहे लेकिन मैं रुकी नहीं।

धूप अब तेज़ हो गई थी। बदन जलने लगा था। मन भी गुस्से से सुलग रहा था। जंगल रौंदते हुए मैं मायके की तरफ़ बढ़ रही थी।

मायके पहुंची तो सब सुनसान था। दरवाज़े भिड़ाकर सब लोग खलिहानों में गये हुए थे। घर में बस अम्मा थी। इन दिनों बाबा और वह बीमार चल रहे थे।

मुझे आंगन में देखकर अम्मा बांह पसारे आगे आई। मुझसे लिपटकर रोने लगी। मैंने पूछा तो अम्मा बोली, “बेटी, देख तेरे बाबा बीमार हैं। तेरी खबर सुनते ही उन्होंने खाट पकड़ ली। हम लोगों को पहले कुछ पता नहीं था। उस दिन मेले में तुम्हारे पति से बात हुई लेकिन उसने हमें कुछ नहीं बताया। फिर खबर आयी कि उसने तुम्हारी इजाज़त से दूसरी शादी रचा ली है।”

मैंने उनकी सारी बातें चुपचाप सुन लीं। बाबा की तरफ़ देखा। मैंने पूछा, “क्या तकलीफ़ है बाबा?” तो सांस छोड़ते हुए उन्होंने कहा, “अब क्या होना है? अब हम थक गये। झुक गये। अब यह सब चलता रहेगा...”

मैंने मुंह धोकर, चाय पी और थके शरीर को दीवार का सहारा देते हुए बैठ गयी। फिर कहा, “बाबा, रात को चार समझदार लोगों को बुलाना। मैं कुछ फैसले करना चाहती हूं।” दोनों ने मेरा कहा सुनकर एक दूसरे की तरफ़ देखा। कुछ समय बाद अम्मा ने कहा, “बाई, अपना भाग्य ही खोटा हो तो किसे दोष दूं? फिर हमारी तो है औरतज़ात। और मुझे देख तारा, हम सौतें भी बहनों की तरह रहीं न?”

“अम्मा, आपने जो किया वह शिक्षा हमें मत देना, वह समय ही थी वैसा। लेकिन अब ज़माना बदल गया है।”

“ठीक है, पर यह तो बताओ कि तुम करना क्या चाहती हो?”

“मैं तिकोना घर नहीं बनाना चाहती। मैं तलाक चाहती हूं।” मैंने बेझिझक कह दिया। “देखो, हमारा पक्ष लूला है। तुम्हारी शादी को आज दस साल हुए, अभी बच्चा नहीं पैदा हुआ... तो क्या अब आप गारंटी दे सकते हैं कि बच्चा पैदा होगा ही?” मेरे सवाल का जवाब बाबा के पास नहीं था। वह चुप रहे।

मैंने कहा, “देखो, प्रभाकर ने शादी कर ली और अब उसकी बीवी उसके साथ ही रहती है। इन दो बातों पर गौर करके पंचायत बुला लो। इसका विरोध करो। प्रभाकर को सज़ा भी दिला दो। सबसे ज़रूरी है पंचायत का यह फैसला करना कि अब मेरा और उसका रिश्ता खत्म हो चुका है। और पंचायम प्रभाकर को ताकीद दें कि अब वह मेरे घर में रह नहीं पायेगा।” मेरी बात सुनकर बाबा ने कहा, “ये क्या बोल रही हो? औरतज़ात हो तुम, अकेले कैसे रहोगी।” मैंने तैश में कहा, “क्यों नहीं रह सकती? कितनी ही औरतें हैं जो अकेली रहती हैं। मैं भी वैसे ही रहूंगी। लेकिन मैं उन दोनों को सबक सिखाऊंगी।”

उनकी उदासीनता और चुप्पी से जो संकेत मुझे मिल रहा था उसे मैंने स्पष्ट रूप में भांप लिया। असल में वह, मेरा, मेरी पढ़ाई-लिखाई का, नौकरी और वैवाहिक जीवन, मेरी भावनाओं और मेरे सारे वजूद का अपमान था।

दोपहर में खाना खाकर तुरन्त वापिस लौटने की मैंने सोची थी। मगर मां बोली, “रात भर तो ठहरो, रात में बातें करेंगे।”

“बात करने को बचा ही क्या है?” मैंने तुनककर कहा।

“अभी मत जाओ। चेहरा कितना उतर गया है तुम्हारा।” मां को सिर्फ़ मेरा चेहरा नज़र आ रहा था। वह मेरे मन की थाह नहीं ले पा रही थी।

अंधेरा होते ही माई घर में आई। सारा शरीर कीचड़ से सना हुआ। बाल चेहरे पर बिखरे हुए। पसीने से तर। सिंदूर नाक तक फैल आया था। आते ही मुझे उड़ती निगाहों से देखकर वह सीधे पिछवाड़े चली गई। उसकी नज़र और उसका यूं चले जाना मुझे अखरा। उसने मुझे “कैसी हो,” या “कब आई” यह तक नहीं पूछा। पूछती भी किस मुंह से? मेरी सौत उसकी गांववाली थी। इतना ही नहीं रिश्ते में वह उसकी दूर की बहन भी थी। फिर मैंने भी उसे सुनाते हुए अम्मा से कहा, “हंसते-खेलते घर में आग लगाने की आदत ही है सोनबावड़ी की औरतों को। पता नहीं और कितने घरों में आग लगायेंगी।”

अम्मा ने एकदम से कहा, “बेटी, इस शादी के बारे में उसे कुछ भी पता नहीं है। उसे कुछ मत कहो।” मैंने कहा, “क्यों न कहूं? अम्मा, तुम चुप रही इसीलिए तुम्हें यह वनवास झेलना पड़ा। अब यही सब मेरे भी हिस्से आ गया...” गुस्से में मैं बोलती चली गई। अम्मा उठकर अंधेरे में बाहर कहीं चली गई।

रात को खाना खाते समय लालटेन की रोशनी में मैं माई की तरफ़ देख रही थी लेकिन न उसने मुझे देखा न मुझसे कोई बात ही की। उसकी चुप्पी मुझे अम्मा, बाबा और गांववालों के शब्दों से ज़्यादा गड़ रही थी।

फिर तो प्रभाकर पर मुकदमा ठोंकना है यह मैंने पक्का तय किया। रुपया खरचना पड़ेगा, छुट्टियां लेनी पड़ेंगी और सबके ख़िलाफ़ खड़े होना पड़ेगा। चलेगा। कम-से-कम इससे मेरे मायके वालों को और ससुराल वालों को सीख तो मिलेगी।

“प्लीज़ योर ऑनर”, शब्दों से मेरी तन्द्रा टूटी। वकील कोर्ट के सामने केस रख रहे थे... “फरियादी ताराबाई सोनावणे को प्रभाकर सोनावणे ने बहुत सताया है। ताराबाई के घर में जबरन एक औरत के साथ घुसकर रहता था। ताराबाई ने इसका विरोध किया तो उन्हें गन्दी गालियां पड़ी और उन्हें पीटा भी गया। ये गम्भीर अपराध है।” वकील कोर्ट के सामने केस खड़ा कर रहे थे।

उन्होंने कहा, “ताराबाई ने प्रभाकर और उसके साथ रहने वाली महिला को घर से भगा दिया। इसीलिए चिढ़कर आरोपी प्रभाकर ने ताराबाई के ऑफिस जाने के बाद उसके घर का ताला तोड़ा और उस महिला के साथ घर में

प्रवेश किया। उस समय ताराबाई के पड़ोसी वहीं उपस्थित थे।"

अपने जवाब में प्रभाकर ने साफ़ इनकार किया कि उसने ताला तोड़ा। ताला तोड़ते समय साथ किसी महिला के होने की बात से भी इन्कार किया। उसने कहा, "मैंने दूसरी शादी नहीं की। सो किसी औरत का मेरे साथ होने का सवाल ही नहीं उठता। मैं गांव लौटा और रास्ते में एक परिचित व्यक्ति से मेरी भेंट हुई। उसी के साथ मैं घर लौटा, अपनी चाभी से दरवाज़ा खोलकर अन्दर आया। बाद में ताराबाई ने वह चाभी मुझसे ले ली।"

"तुम्हारे साथ दूसरा व्यक्ति कौन था?" वकील ने पूछा। धूर्त हंसी के साथ मेरी तरफ़ देखते हुए प्रभाकर ने जवाब दिया। "मेरी इकलौती पत्नी का इकलौता भाई सदाशिव कांबले मेरे साथ था।" मैंने चौंककर सदाशिव की तरफ़ देखा तो वह "शांत रहो", "रुको" के संकेत मुझे दे रहा था।

वकीलों ने फिर सदाशिव पर प्रश्नों की बौछार की। पर सदाशिव पर जैसे किसी ने मन्त्र ही फेर दिया था। उसने अपनी ज़बान से प्रभाकर की शादी नहीं होने का सफ़ेद झूठ परोसा। और कहा, "इधर कुछ समय से मेरी बहन ताराबाई और बहनोई प्रभाकर के बीच झगड़े चल रहे थे। बच्चा नहीं होना ही उन झगड़ों की जड़ थी यह सब लोग जानते हैं।"

"फलां तारीख को मेरे बहनोई प्रभाकर मुझे रास्ते में मिले। उन्होंने घर चलने के लिए कहा सो मैं उनके साथ घर चला गया। प्रभाकर ने चाभी से दरवाज़ा खोला। हम लोग अन्दर दाखिल हुए। ताराबाई की गलतफहमी को कोर्ट दूर करे और दोनों को सुलह करने की सलाह दे।"

काफी लम्बे बयान के बाद शादी का सबूत पेश करने के लिए कहा गया। अगली तारीख पक्की करने के बाद कोर्ट बर्खास्त हुआ। वकील भुनभुनाते हुए बाहर निकले और उन्होंने कहा, "तुम्हारा इकलौता गवाह, तुम्हारा भाई भी तुम्हारे ख़िलाफ़ क्यों गया?"

"साहब, मैं क्या कर सकती हूं? गांव से लौटने के बाद सुलह कराने के लिए वह मेरे पीछे पड़ा था।" "तो क्या, बिना किसी पूर्वसूचना के उसे ऐसा करना चाहिए था? चाहें तो झूठी गवाही देने के जुर्म में हम उसे सज़ा भी दिला सकते हैं।"

"हां साहब, लेकिन बिना सबूत के मैं कुछ भी नहीं कर सकती हूं यह भी वह जानता है। इसके बावजूद मैं यह केस लड़ूंगी, साहब..."

"किसके सहारे?"

"देखते हैं, कोई-न-कोई राह निकल ही आयेगी।" मैंने कहा तो सही लेकिन खुद मुझे अपनी नाव डूबती महसूस हो रही थी।

"ठीक है, फिर एक बार मैं आपके पड़ोसियों से मिल लेता हूं। देखते हैं मेरी बातों का क्या असर होता है... इसके बावजूद शादी का प्रमाणपत्र तो चाहिए ही"।

दूसरे दिन दफ्तर गयी तो सहेलियों ने कहा, "गांव जाओ, किसी पुरोहित को पकड़ो। रुपये देकर प्रमाणपत्र ले आओ। जब प्रभाकर झूठ बोल रहा है तो उसे सबक तो सिखाना ही पड़ेगा ना? सच पूछो तो घर की चीज़ें गुम हो जाने की रपट भी तुम्हें लिखानी चाहिए।"

"सचमुच, ऐसा ही करें, तो? वैसे भी मुझे सब तरफ़ से कंगाल बना के ही प्रभाकर गया है। सदा भी उसके साथ हो गया है। मेरी सौत दूर के रिश्ते में उसकी मौसी जो लगती है। वह प्रभाकर से जाकर मिला ही। इसी बहाने भाई से भी बदला लिया जा सकता है। तीन चार दिनों तक यही विचार मेरे दिमाग में कौंधते रहे।

उस दिन मैं ऑफिस से जल्दी ही घर पहुंची। वकील के आने की बात पड़ोसन को बतायी और ताला खोलकर तुरंत घर में घुस गयी। प्रभाकर का डर भी था। न जाने कब आ धमके।

कपड़े बदलकर चाय रखी तो बेल बजी। मुझे लगा वकील होंगे। की-होल से झांककर देखा तो दंग रह गई। बाहर माई खड़ी थी। मैं डर गयी। ये क्यों आयी होगी? डरते-डरते, बड़ी सावधानी से दरवाज़ा खोला। वह अकेली ही आयी थी। उससे कुछ बोलने की इच्छा ही नहीं हुई। उसने भी कुछ नहीं कहा। अन्दर आकर ज़मीन पर ही बैठ गयी। पानी का गिलास उसके सामने रखते हुए फिर मैंने बात छेड़ी, 'कब आयी?' 'सुबह' "यहां कौन ले आया? सदा।"

"बाबा, अम्मा कैसे हैं?"

"ठीक हैं।"

वह गिनकर ही बोल रही थी लेकिन पता नहीं क्यों, मुझे लगा कि वह बहुत कुछ बोलने आयी है। वह क्या बोलना चाहती थी, यह भी मैं जानती थी। सदा ने मेरे ख़िलाफ़ झूठी गवाही दी थी। उसे मैं अन्दर करवा सकती थी। मेरी सौत उसकी बहन लगती थी। शायद यही वह कहने आयी थी कि मेरी बहन और अपने भाई को माफ़ कर दो।

उसके सामने चाय रखकर मैंने पूछा, "क्यों आयी हो?"

चाय की भाप की तरफ़ देखते हुए माई ने कहा, "तारा, मैं जानती हूं तुम मुझसे नाराज़ हो, बिल्कुल बचपन से ही नाराज़ हो। मैं घर में आई इसलिए तुम्हारी अम्मा पर अन्याय हुआ तुम्हें ऐसा लगता था। लेकिन क्या तुमने कभी मेरे साथ हुए अन्याय के बारे में सोचा है? तुम जब दस साल की थीं तब मैं सत्रह वर्ष की थी। मुझे मां बुलाते समय तुम्हें दुःख होता था, पर तुम्हें बेटी कहते समय मुझे भी बुरा लगता था। लेकिन ये बातें आखिर हम बतायें तो किसे। तुम्हारी मां ने मुझे स्वीकारा इसलिए उन्हें बड़प्पन मिला लेकिन मैंने सबको अपनाया तो मुझे क्या मिला? दो बीवियों का पति होना पुरुष के लिए आनंद की बात होगी लेकिन इससे औरतों के जीवन का क्या हश्र होता है इस पर कभी किसी ने नहीं सोचा।" माई के मुंह से ये फलसफ़े जैसी बात सुनकर मैं दंग रह गयी। चाय की चुस्की लेते हुए माई इस तरह बोल रही थी मानो बीती हुई ज़िन्दगी की कड़वी यादों के ही घूंट ले रही हो।

"तारा, तुम पढ़ी-लिखी हो, नौकरी करती हो। तुम्हारे हाथ में सत्ता है सो तुम पति को कोर्ट में खींच सकती हो। मैंने और तुम्हारी अम्मा ने क्या किया? मैं बाप की उम्र के आदमी की बीवी बनी। उस वक्त मुझ पर क्या बीती होगी? इसका तुम्हें आज भी ख्याल नहीं है। तुमने कहा था कि सोनबावड़ी की औरतें हंसते-खेलते घरों में आग लगाती हैं, लेकिन तारा आग औरतें नहीं लगातीं, आग लगाते हैं आदमी। अपनी बच्चियों को किसी के भी हाथों बेच देते हैं और किसी की नन्ही बच्ची को भी ब्याह लाते हैं। तारा जो तुम आज कर रही हो वह मैं भी करना चाहती थी। पर मैं ठहरी अनपढ़-गंवार। मेरे पास न शिक्षा थी न सत्ता। लेकिन तुम कर सकती हो, इसलिए मुझे तुम पर नाज़ है।"

"मैं जानती हूं कि तेरी तरफ़ से बोलने वाला कोई नहीं है क्योंकि पढ़ने-लिखने के बावजूद तुम एक औरत ही हो इसलिए तुम्हारे भाई ने—सदाशिव ने—भी झूठी गवाही दी है। लेकिन तुम चिन्ता मत करो। मैं तुम्हारे साथ हूं। जंवाईबाबू की दूसरी शादी का सबूत तुम्हें चाहिए था ना? मैं लायी हूं।" माई ने अपनी थैली में से कागज़ निकाला और मेरे हाथ में दिया। कहा, "जिस पुरोहित ने तुम्हारे पति की शादी रचाई उससे मैं लिखा कर लायी हूं यह कागज़।" ये लो, और अपने भाई और पति का जो करना हो करो।"

"तारा, ऐसे क्या देख रही हो, तुम्हारा पति शादी रचाकर इंकार कर रहा है। उसने तुम्हारे बारे में नहीं सोचा। यह तो चलो ठीक है। लेकिन जिसके साथ उसने शादी की उसके बारे में सोचा है? उसके साथ शादी की बात को अगर वह झूठ बताता है तो उसे किस रिश्ते से रख रहा है? अपनी रखैल बनाकर?..."

माई का सवाल सुनकर, उसका लाया सबूत देखकर मैं दंग रह गई। दरवाज़े की बेल बजी, बाहर वकील खड़े थे और मैं अचम्भित-सी माई की तरफ़ बस देखती रह गई।